International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 144-146

समन्वित विचारधाराओं का काव्य : कुरुक्षेत्र

पूजा चीमा

पीएच०डी०, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

रामधारी सिंह दिनकर का कुरुक्षेत्र एक विचार प्रधान काव्य है, ''हिन्दी कविता में 'कुरुक्षेत्र' एक विशिष्ट स्थान का अधिकारी है, और उसका अध्ययन सर्वथा महत्वपूर्ण है। आज के बौद्धिक वैज्ञानिक युग में तो यह महत्व और भी अधिक हो जाता है जबकि काव्य का उद्देश्य मनोरंजन अथवा रस–वर्षण–मात्र नहीं रह गया है, बल्कि काव्य में विचार तत्व की प्रतिष्ठा हो चुकी है।''[1] 'कुरुक्षेत्र' में दिनकर ने विविध विचारधाराओं के प्रभावस्वरूप एक अछूते विषय की नवीन उद्भावना की है। कवि ने हृदय और बुद्वि, यथार्थ और आदर्श, वचन और कर्म, मन और देह– सभी प्रकार के समन्वय पर बल दिया है। कुरुक्षेत्र की काव्य विधा को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है कुछ ने इसे मुक्त रचना कहा है तो कुछ ने विचारप्रधान लम्बी कविता, इसी प्रकार कुछ विद्वान इसे महाकाव्य तो कुछ इसे खण्डकाव्य मानते हैं। कुरुक्षेत्र को काव्य विधा के किस निकष पर परखा जाये। यह एक विचारणीय एवं विवादास्पद प्रश्न हो गया है इसका कारण यह है कि इसमें इन सभी के तत्वों का कुछ न कुछ समावेश है। वस्तुतः कुरुक्षेत्र को प्रबंध काव्य के रूप में ही स्वीकृति मिली है। ''दिनकर ने महाभारत के कथानक से केवल दो पात्रों का आधार लिया है, अपनी बात कहने के लिए कवि अपनी बात युधिष्ठिर और भीष्म को लिए बिना भी कह सकता था। परंतु वह प्रबंध काव्य न बनकर मुक्तक बन जाता यह बात भूमिका में ही कही है।''[2]

'कुरुक्षेत्र' की पृष्ठभूमि 'महाभारत' की युद्धोत्तर परिस्थितियाँ हैं। यह काव्य सात सर्गों में विभक्त है। महाभारत युद्ध में घटित सर्वनाश के अनुभव से युधिष्ठिर बेचैन हैं, व्याकुल है, स्वयं को युद्ध का उत्तरदायी मानते हुए युधिष्ठिर का मन अत्यधिक खिन्न एवं ग्लानि भाव से परिपूर्ण है। युधिष्ठिर भारवश हृदय के साथ अपनी समस्याओं के समाधान के लिए शरपंजर पर पड़े पितामह भीष्म के पास जाते हैं। वस्तुतः युधिष्ठिर और भीष्म के इन्हीं संवाद–स्वरूप में कुरुक्षेत्र की रचना की गई है। इसकी कथा महाभारत की पुनरावृत्ति नहीं है, कथा युद्धान्त की है और ''युद्ध निंदित और क्रूर कर्म है।''[3] 'कुरुक्षेत्र' की रचना के पीछे मुख्य प्रेरणा 'कलिंग विजय' को माना जा सकता है, 'महान, शांति दूत के मार्ग पर चलने वाले 'सम्राट अशोक' को अपनी कविता का विषय बनाते हुए जब दिनकर 'कलिंग विजय' की रचना कर रहे थे, उसी समय उन्हें युद्ध के विनाश के कारण प्राप्त हुए और कवि ने 'कुरुक्षेत्र' लिखने की बात सोची।'[4]

कुरुक्षेत्र निश्चित रूप से एक विचार प्रधान कविता है। इस कृति में अभिव्यक्त विचारों पर किस सिद्धान्त की छाप लगी हुई है? इस प्रश्न को लेकर हिन्दी के आलोचकों में गम्भीर मतभेद है। कुछ आलोचकों के अनुसार ''दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' में प्रगतिवादी विचारों को अभिव्यक्ति दी है, और उनकी विचार भूमि मार्क्सवादी विचार–भूमि (जो प्रगतिवाद का मूल स्त्रोत है।) है।''[5]

कुरुक्षेत्र को प्रगतिवादी रचना मानने वालों में पं. नन्ददुलारे वाजपेयी, डॉ. शम्भुनाथ पाण्डेय, पंडित गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' आदि आलोचकों के नाम महत्वपूर्ण हैं। प्रो. कामेश्वरनाथ शर्मा 'कुरुक्षेत्र को अराजकतावादी दर्शन की कृति मानते हैं। इसके अतिरिक्त ''वे आलोचक जो 'कुरुक्षेत्र' को भारतीय संस्कृति से प्रभावित मानते हैं तथा जिन्हें समाजवाद के सर्वथा व्यापक रूप के प्रति भी दिनकर की निष्ठा स्वीकार है इस वर्ग में आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, श्री शिवचन्द्र शर्मा, डॉ. नगेन्द्र और डॉ. देवराज प्रभृति आलोचक आते हैं।''[6] उपर्युक्त वर्णित विषय से अभिप्रेत है कि कुरुक्षेत्र में एक से अधिक विचारधाराओं का सन्निवेश हुआ है। जहाँ मन और बुद्धि का समन्वय भारतीय संस्कृति का आत्मतत्व है। मनुष्यों के मध्य पारस्परिक, प्रेम, सौहार्द, करुणा, दया, ममता मानवतावाद का मूलाधार है। इसी प्रकार धर्म का पालन, सत्य, अहिंसा गाँधीवादी विचारधारा का आधार है वहीं शोषण के विरुद्ध संघर्ष मार्क्सवाद अथवा समाजवाद के विषय हैं। इस प्रकार कुरुक्षेत्रकार पर पौरस्त्य तथा पाश्चात्य सभी विचारधाराओं का प्रभाव गम्भीर रूप से पड़ा है। कुरुक्षेत्र को प्रभावित करने वाले विभिन्न विचारक एवं विचारधाराओं का संक्षिप्त विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है–

कुरुक्षेत्र की विचार भूमि पर रसेल का पर्याप्त प्रभाव निरुपित किया जा सकता है। ''दिनकर ने कुरुक्षेत्र लिखते समय रसेल के साहित्य का अध्ययन किया था। रसेल निर्भीक और स्वतंत्र प्रकृति के लेखक हुए हैं। वह दो प्रकार के विचारक है एक तार्किक और दूसरे मानव शुभ चिंतक के रूप में। दिनकर ने उनके जिन विचारों को ग्रहण किया है। वह है मानव का शुभचिन्तक रूप''[7] रसेल व्यक्ति के लिए नैतिकता के दोनों रूपों (वैयक्तिक एवं नागरिक) की समान महत्ता स्वीकार करते हैं। ''एक के बिना दूसरा अपूर्ण है तथा दोनों के समुचित सामंजस्य के बिना जीवन का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता''[8] इसी भाँति दिनकर ने भी कुरुक्षेत्र में भीष्म के माध्यम से वैयक्तिक नीति के साथ नागरिक नीति–तप, करुणा, क्षमा, विनय, त्याग की अनिवार्यता पर बल दिया है। साथ ही जीवन में ऐसी परिस्थितियों का भी अभाव नहीं, जब समुदाय की रक्षा हेतु इन गुणों की अवहेलना करनी पड़ती है–

''व्यक्ति का है धर्म तप, करुणा क्षमा,
व्यक्ति की शोभा विनय भी, त्याग भी,
किन्तु, उठता प्रश्न जब समुदाय का
भूलना पड़ता हमें तप–त्याग को।''[9]

इसके अतिरिक्त रसेल की भाँति दिनकर भी मनुष्यों के पारस्परिक सहयोग, मानवीय मूल्यों की स्थापना, आवश्यक परिस्थितियों में ही धर्म एवं शांति की स्थापना के लिए युद्ध की अनिवार्यता को स्वीकार करते हैं।

कुरुक्षेत्र पर लोकमान्य बालगंगाधर तिलक द्वारा रचित 'गीता–रहस्य' की भी स्पष्ट छाप परिलक्षित है। 'गीता–रहस्य' और कुरुक्षेत्र में एक विचित्र साम्य यह है कि जिस प्रकार 'गीता' में (अर्जुन को अपने स्वजन के प्रति मोह से निकालने के लिए धर्मार्थ हेतु) श्रीकृष्ण के उपदेश 18 अध्यायों में वर्णित हैं उसी प्रकार भीष्म भी युधिष्ठिर को संन्यास के मार्ग पर जाने से रोकने हेतु युधिष्ठिर की समस्याओं का निराकरण करते हैं।

दिनकर में गाँधीवाद के प्रति आस्था विद्यमान है क्योंकि गाँधीवाद भारतीय आदर्शवाद से अत्यधिक साम्य रखता है, और भारतीय आदर्शवाद दिनकर के संस्कारों में रमा हुआ है। ''दिनकर से वार्तालाप करते समय लेखक को अनुभव हुआ कि कवि को 'गाँधीवादी' कहा जाना विशेष प्रिय है।''[10] 'कुरुक्षेत्र' में न केवल युधिष्ठिर बल्कि भीष्म की विचारधारा पर भी गाँधीवाद का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता हैं। भीष्म अहिंसा में अखंड विश्वास रखते हैं यह अहिंसा कोमल भाव–भूमि पर विकसित एवं पल्लवित है। इसमें सेवा भावना, चरित्र, मानवता, निर्मल तप के पुण्य खिलते हैं, जो जन–जन के मन में पुण्य किरणों का संचार करते हैं।

''मैं भी हूँ सोचता, जगत से
कैसे उठे जिघांसा
किसी प्रकार फैले पृथिवी पर
करुणा, प्रेम अहिंसा''[11]

भीष्म जहाँ एक ओर पृथ्वी पर अहिंसा के प्रसार के आकांक्षी है वहीं दूसरी ओर वे कायरता की अपेक्षा हिंसा को कहीं अधिक श्रेष्ठ मानते हैं।

''किसने कहा, पाप है समुचित
स्वत्व–प्राप्ति–हित लड़ना?
उठा न्याय का खड्ग समर में
अभय मारना–मरना?''[12]

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि सिद्धान्त रूप में गाँधीवाद में विश्वास रखते हुए भी दिनकर पूर्ण रूप से गाँधीवाद को अपने व्यवहार में न ला सके। स्वयं दिनकर के शब्दों में, ''मैं एक बुरा गाँधीवादी हूँ'[13] वस्तुतः 'कुरुक्षेत्र' में गाँधी जी के 'चारित्रिक–कर्मयोग' के तत्व का प्रभाव अवश्य दिखाई देता है परन्तु उसे गाँधीवादी कृति कहना सरासर भूल होगी। कुरुक्षेत्र में उद्घाटित कर्मयोग गाँधी जी के कर्मयोग से इस अर्थ में भिन्न है कि अन्त में जाकर गाँधी जी आत्मस्थ हो जाते हैं, जो व्यक्तिवादी साधना के अधिक समीप है वही कुरुक्षेत्र का प्रवृत्तिमार्गीय कर्मयोगी संसार में रहते हुए भी अपने 'स्व' का रागात्मक विस्तार कर देता है जो समाजवादी साधना के अधिक नजदीक है।

कुरुक्षेत्र को कुछ विद्वानों ने प्रगतिवादी रचना भी माना है क्योंकि कुरुक्षेत्र के भीष्म शोषक एवं शोषित का प्रश्न उठाते हैं। और शोषण, उत्पीड़न से संत्रस्त शोषित वर्ग को खड्ग उठाकर युद्ध करने को प्रशंसा की दृष्टि से देखते हैं–

''पातकी न होता है प्रबुद्ध दलितों का खड्ग,
पातकी बताना उसे दर्शन की भ्राँति है,
शोषण की शृंखला के हेतु बनती जो शांति,
युद्ध है, यथार्थ में, व भीषण अशांति है।''[14]

वे स्पष्टतः स्वीकार करते हैं कि आर्थिक–साम्य लाए बिना स्थायी शांति की स्थापना नहीं हो सकती। शांति का वास्तविक रूप है, सुख सुविधाओं में समानता जो न्याय और पौरुष के दिव्य तत्वों से निर्मित और पुष्ट होता है। शान्ति का यह वास्तविक रूप ही मन पर शासन करने की क्षमता धारण करता है।

''शान्ति नहीं तब तक जब तक
सुख भाग न नर का सम हो,
नहीं किसी को बहुत अधिक हो,
नहीं किसी को कम हो।''[15]

उपर्युक्त उदाहरण में समाजवाद की उच्चतम अवस्था साम्यवाद में प्रति दिनकर की आस्था प्रकट हुई है।

दिनकर का विचार है कि मानव संसार में जो भी प्रयत्न कर रहा है, वह शांति स्थापना के लिए ही है। 'कुरुक्षेत्र' में आद्यन्त जिस स्वर की विद्यमानता निर्विवाद है, वह मानवता का ही स्वर है। द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ सर्ग में कवि का ध्येय युद्ध आदि मानवीय समस्याओं को केवल मानवीय धरातल पर देखने का ही रहा है, पंचम सर्ग में युधिष्ठिर के शोक का मूल कारण मानवीय संहार ही है। षष्ठ सर्ग में कवि मनुष्य के श्रेय की बात उठाता है कि ''मानव का श्रेय बुद्धि पर चैतन्य हृदय की विजय है।''[16] वास्तव में कुरुक्षेत्र का षष्ठ सर्ग उसका प्राण है, जिसके अंतर्गत यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि का प्रतिपाद्य मानव कल्याण ही है कोई मत–वाद नहीं।

''श्रेय होगा धर्म का आलोक वह निर्बन्ध,
मनुज जोड़ेगा मनुज से जब उचित सम्बन्ध''[17]

दिनकर की आकांक्षा है कि समस्त मानव–जगत में उदात्त भावनाओं का परिचालन हो, विश्व बंधुत्व की स्थापना हो, पृथ्वी पर मानव प्रेम की निरंतर स्त्रोतस्विनी प्रवाहित हो, मनुष्यों के मध्य राग–द्वेष की समाप्ति हो तथा सम्पूर्ण पृथ्वी पर स्नेह का साम्राज्य स्थापित हो। कवि ने सप्तम् सर्ग में भीष्म द्वारा जो संदेश युधिष्ठिर को दिए हैं, वे पूर्णतः आशावादी हैं। इस आशावाद का मानवतावाद से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। आशा वास्तविक रूप में मानवतावाद जैसे प्रवृत्ति मार्गी दर्शन का मूल आधार है। अतः स्पष्ट शब्दों में कुरुक्षेत्र मानवीय मंगल कामना से परिपूर्ण अनुपम काव्य कृति है। कुरुक्षेत्र का संदेश भी मानवतावादी है क्योंकि आरंभ से अंत तक कहीं भी मानवीय हित–चिंतन को नकारा नहीं गया इसके विपरीत मानव कल्याण ही कवि का ध्येय रहा है।

संदर्भ

1. 'कुरुक्षेत्र मीमांसा'– कान्तिमोहन शर्मा, पृष्ठ 9, साहित्य प्रकाशन मंडल दिल्ली, प्रथम संस्करण–2000।
2. 'कुरुक्षेत्र एक अध्ययन'– विष्णु सरवदे, पृष्ठ 42, अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2003।
3. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, 'निवेदन' पृष्ठ 3, उदयाचल प्रकाशक, पटना।
4. 'कुरुक्षेत्र एक अध्ययन', विष्णु सरवदे, पृष्ठ 39, अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2003।
5. 'आधुनिक हिन्दी काव्य में निराशावाद,, डॉ. शम्भूनाथ पाण्डेय पृष्ठ 386।

6. 'कुरुक्षेत्र मीमांसा', कान्तिमोहन शर्मा, पृष्ठ 76, साहित्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2000।
7. 'कुरुक्षेत्र एक अध्ययन', विष्णु सरवदे, पृष्ठ 43, अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2003
8. Without civic morality communities perish, without personal morality their survival has no value- 'Authority and Individual', page 111
9. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, पृष्ठ 26, उदयाचल प्रकाशक, पटना।
10. 'कुरुक्षेत्र–मीमांसा', कान्ति मोहन शर्मा, पृष्ठ 67, साहित्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2000।
11. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, पृष्ठ 41, उदयाचल प्रकाशक, पटना।
12. वही, पृष्ठ 35।
13. 'कुरुक्षेत्र मीमांसा', कान्तिमोहन शर्मा, पृष्ठ 67, साहित्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2000।
14. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, पृष्ठ 41, उदयाचल प्रकाशन, पटना।
15. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, पृष्ठ 33, उदयाचल प्रकाशन, पटना।
16. 'कुरुक्षेत्र मीमांसा', कान्ति मोहन शर्मा, पृष्ठ 84, साहित्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2000।
17. 'कुरुक्षेत्र', दिनकर, पृष्ठ 104, उदयाचल प्रकाशन, पटना